नाडी

आचार्य माधव शास्त्री

मैं आज नाड़ियों के सन्दर्भ में वेद वर्णित ज्ञान की ओर ध्यानाकर्षण करना चाहता हूं यद्यपि यह प्रथम प्रयास है हर सम्भव सरलीकरण करते हुए प्रस्तुत कर रहा हूं।

धरा पर अनवरत आन्तरिक व बाह्य रूप में बहने वाली नदियां कहलाई जाती हैं जिनमें जल अपनी तरलता और शुद्धता का सञ्चरण करता हुआ चराचर को आर्द्रता प्रदान कर रहा है।

यद् आपःसम्प्रयतीरहावनदता हते तस्माद् नद्यो नाम स्थ...। (अथर्व 1/3/13)

हे नदी! तुम नित्य गतिशील रहने वाली हो। मेघों के गर्जन व वर्षण के पश्चात् कल कल नाद करने के कारण नदी नाम पड़ा।

यत्प्रेषिता वरुणेनाच्छीभं समवल्गत्, तदाप्नोति इन्द्रो वो यतिस्तस्मादापो अनुष्ठन्।।

हे नदी! जब वरुण प्रेरित नृत्य करती हुई गति प्राप्त की तब आपका स्वरुप इन्द्रमय हुआ इसलिए आप नाम पड़ा।

अपकामं स्यन्दमाना अवीवरत् वो हि कम्, इन्द्रो वः शक्तिभिर्देवीस्तस्माद् वार्नां वो हितम्।।

बिना इच्छा के नित्य प्रवाहित होने वाले हैं अतः इन्द्र ने आपका वरण किया, ऐसा होने पर जल को वारि नाम भी कहा जाता है।

वैदिक ऋचाओं से यह सिद्ध होता है कि नदियां निरन्तर बहती हुईं सृष्टि को पवित्र कर रही हैं तथैव नाड़ियां भी ।

नाड्य अन्तःकरणे स्यूताःजाल संस्यूतःसूत्रवत्। मा.मा.4/10

नाडियां शरीर के अन्तःकरणों में सूत्र के जालवत् सर्वत्र व्याप्त हैं जैसे सूत्रों के संयोग से वस्त्र बनता तथैव नाडियां भी अपना आकार सुनिश्चित करती हैं जो पहले से ही निश्चित है।

देहान्तरालगता:सिरा अन्तस्सुषिरा:, स्नाय्वाख्या:नाड़य:।।

नाड़ियां शरीर के चरम सीमा तक फैली हुई हैं जिन्हें स्नायु व धमनी भी कहा जाता है।

शतस्य धमनीनां, सहस्त्रस्य हिराणाम्। अस्थुरिन्मध्यमा इमा:साकमन्ता अरंसत्॥(अथर्व 1/17/03)

सो धमनियों और हज़ारों नाड़ियों में मध्यम नाड़ियों के रक्त को रोकता हूं।इस ऋचा से ज्ञात होता है कि नाड़ियां तीन प्रकार की होती हैं जिन्हें उत्तम, मध्यम और अन्तिम बताया गया है।

भौतिक व आध्यात्मिक देह में नाड़ियों की स्थिति बनी रहती है।

नाडी चक्रमिति प्राहुस्तस्मान्नाड्य: समुद्गता:।

नाडी चक्र से नाड़ियां प्रकट होती हैं।

गान्धारी हस्तिजिव्हाश्च नयनान्तं प्रधावत्, नाडीचक्रेण संस्यूते नासिकान्तमुभे गते।।

नाडीचक्र से दो नाडियां निकलती हैं जो नासिकान्त नेत्र के रूप में प्रकट होती हैं जो सव्य में है उसे गान्धारी और अपसव्य में है वह हस्तिजिव्हा हो जाती है, अत: दोनों आंखों के गर्त जिनमें नेत्र का स्वरूप बनता है, वे ये दोनों नाडियां हैं।

गान्धारी (प्रकाश को धारण करने वाली)

गान्धारी सव्यनेत्रान्ता, प्रोक्ता वेदान्तवेदिभि:।

गान्धारी वाम भाग की आँख में अपना मुख खोलती है।

'इडा पृष्ठेऽस्तु गान्धारी'

इडा नाडी के पृष्ठ भाग में गान्धारी मुख्य रूप से विद्यमान है जो 'मयूरगलसन्निभा' मयूर के गले के रंग वाली (नीला वर्ण) है।

सव्यपादादिनेत्रान्ता गान्धारी परिकीर्तिता ।।

यह नाडी पैर के अङ्गुष्ठ व तर्जनी के मध्य से नेत्रान्त तक अवस्थित है।

हस्तिजिव्हा:-

हस्तिजिव्होत्पलप्रख्यापसव्यभागस्य मूर्धादि पादाङ्गुष्ठान्तमिश्रिता।

यह नाड़ी भूरे रंग की पैर के अङ्गुष्ठ व तर्जनी अंगुली के मध्य से नेत्रान्त में अपना मुख खोलती है। वरुण देव अधिष्ठाता देव है।

पूषा व अलम्बुसा नाड़ियां:

पूषा चालम्बुसा नाडी, कर्णद्वयमुपासते।

नाडी शुक्लाद्यातस्माद् भ्रूमध्यमुपसर्पति।।

दोनों कानों के खुले हुए विवर पूषा और अलम्बुसा नाडी कहे जाते हैं ये भौंहों के मध्य से निकलती है।

पूषा याम्याक्षिपर्यन्तम्, पिङ्गलायास्तु पृष्ठतः।

पूषा नाडी दाहिनी आंख के पृष्ठ भाग में पिङ्गला नाड़ी के समीपवर्ती है जिसका वर्ण (नीलजीमूतसन्निभा) काले बादल के समान है तथा पूषा देव अधिष्ठाता हैं ।

अलम्बुसा नाडी:-

अलम्बुसा पीतवर्णा,कण्ठमध्ये व्यवस्थिता।

'अलम्बुसा' यह नाडी पीले रंग की होती है तथा कण्ठ से कान के विवर के रूप में प्रकट होती है। इस नाडी के अधिष्ठाता देव वरुण हैं।

नाभि:-

कन्दस्थानम्मुनिश्रेष्ठ, मूलाधारान्नवाङ्गुलम्। चतुरङ्गुलमायाम:विस्तरम्मुनिसत्तम ।।

कुक्कुटाण्डवदाकारं, भूषितं च त्वगादिभिः। तन्मध्यनाभिरित्युक्तं मुनेः वेदान्तवेदिभिः।

देह के मूलाधार से नौ अंगुल ऊपर, चार अंगुल प्रमाण वाला विस्तार, मुर्गे के अण्डे की आकृति और चर्म के आवरण से आच्छादित को नाभि की नाड़ी कहा जाता है।

मूलाधार चक्र नाडी:-

देहस्य मध्यमस्थानं, मूलाधारमित्युच्यते। गुदात्तु द्व्याङ्गुलात् उर्ध्वमेढ्रात्तुउर्ध्व द्व्यङ्गुलादधः ।

मा.मा.4/12

गुदा से दो अंगुल उपर व लिङ्ग से दो अंगुल नीचे के स्थान को मूलाधार नाड़ी कहते हैं।

त्रिकोणोऽधो मुखाग्रश्च, कन्यकायोनिसन्निभःयत्र कुण्डलिनी नामा पराशक्ति प्रतिष्ठिता।

त्रिभुज जिसका मूल नीचे की ओर है उस स्थान पर कुण्डलिनी शक्ति विद्यमान रहती है। त्रिभुज के तीन बिन्दुओं से तीन नाड़ियां निकलती हैं।

प्राणाग्निबिन्दुनाडीनां, सावित्री सा सरस्वती। मूलाधाराग्रकोणस्था, सुषुम्णा ब्रह्मरन्ध्रगा ।

शक्ति रूप त्रिभुज के तीन बिन्दु होते हैं (1)प्राण (2)अग्नि (3)मूल बिन्दु

बिन्दु नामक कोण से सुषुम्णा नाडी का उद्गम स्थल है, यहाँ से ब्रह्मरन्ध्र के रूप में अपना मुख खोलती है सुषुम्न उस शक्ति का नाम है, जो प्रकाश के उत्पन्न होते ही उसके गन्तव्य चरम सीमा पर पहुँच कर फैल जाती है तथैव कुण्डलिनी शक्ति के जागरण होने पर ब्रह्मरन्ध्र में तत्काल प्रकाश हो जाता है।

इडा व पिङ्गला नाडीः-

मूले ऽर्धछिन्नवंशाभा,षडाधार समन्विताः।तत्पार्श्व कोणयोर्जाते,द्वे इडे पिङ्गले स्थिते।।

मूलाधार के त्रिकोणों के शेष रहे दो उपरी कोण जो प्राण व अग्नि रूप हैं प्राणनामक कोण से बांस के वर्ण वाली,आधे कटे बांस की आकृति जैसी तथा छः धाराओं से युक्त इडा तथा अग्नि कोण से पिङ्गला नाडी उत्पन्न होती हैं।

इडा तु शंख कुन्दाभा तस्याःसव्ये व्यवस्थिता ।।

इड़ा नाड़ी शंख एवं कुन्द पुष्प के समान श्वेत तथा पिङ्गला के सव्य भाग में स्थित है जो नासिकाग्र रन्ध्र रूप में अपना मुख खोलती है। चन्द्र इसके अधिष्ठातृ देवता हैं।

पिङ्गला नाडीः

'पिङ्गला सिक्तरक्ताभादक्षिणम्पार्श्व मिश्रिता'

इस नाडी का रंग रक्त (लाल) सुषुम्ना नाडी के दाहिने भाग में स्थित रहती है।

'या वाममुष्कसम्बद्धा सा श्लिषति सुषुम्णया'

जो अपसव्य मुष्क से सम्बन्ध रखती हुई सुषुम्ना नाड़ी से सटती हुई अपसव्य अर्थात् दाहिने नासारन्ध्र के रूप में अपना मुख खोलती है, वह पिंगला सूर्य इसके अधिष्ठाता देव हैं।

विश्वोदरी नाडीः

विश्वोदराभिधा नाडी, तुण्डमध्ये व्यवस्थिता।

यह नाड़ी मुख के मध्य में स्थित है।

हस्तिजिव्हा कण्ठ मध्ये वक्षः विश्वोदरी स्थिता।

नाडी विश्वोदरी नामा भुङ्क्तेऽन्नं चतुर्विधम् ।

यह गले के रन्ध्र के रूप में होती है जो भोजन को निगलती है। 'भगवान् पावकः पति' इस नाड़ी के अधिष्ठाता पावक देव हैं।

पीता पयस्विनी तोयं कण्ठस्था कुरुते क्षुतम्, राका शुक्लं सिनीवाली मूत्रं मुञ्चेत् कुहुर्मलम्।

पयस्विनी नाडी जल को निगलने में सहायक होती है, सिनीवाली मूत्र को रोकने व छोड़ने का काम करती है तथा कुहु नाडी मल विसर्जन व रोकने का कार्य करती है।

नाडियों का देह में अपना विस्तार व योगदान निरन्तर जारी रहता है, ये इतनी गूढ़ नहीं, लेकिन अनेक रहस्यों को संजोकर स्वयं में सुरक्षित भी रखती हैं।